

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 6: भगवान् शिव का प्रसादन

14 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



कैलास पर्वत पर एक विशाल वटवृक्ष के नीचे देवगण भगवान् शिव को पूर्ण शान्ति में विराजमान देखते हैं — क्रोध से रहित, ब्रह्म के आनन्द में लीन, महर्षि नारद को सनातन सत्य का उपदेश देते हुए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में सती की मृत्यु पर भगवान् शिव के शोक ने पराक्रमी वीरभद्र को जन्म दिया, जिन्होंने दक्ष के अभिमानी यज्ञ का विध्वंस किया और उसे राख में छोड़ दिया। यह षष्ठ अध्याय बताता है कि तूफान के पश्चात् क्या हुआ। पराजित देवगण तथा ऋत्विज ब्रह्मा की शरण में जाते हैं, जो

उन्हें कैलास पर्वत पर उसी भगवान् की क्षमा माँगने के लिए ले चलते हैं जिनका उन्होंने अपराध किया था। वहाँ, शिव के पर्वत की मनोहरता के बीच, वे उन्हें शान्त धैर्य में विराजमान, सनातन सत्य का उपदेश देते हुए पाते हैं; और ब्रह्मा, हाथ जोड़कर, शास्त्रों की सबसे सुन्दर प्रार्थनाओं में से एक अर्पित करते हैं — एक प्रार्थना जो शिव की सच्ची महिमा को पहचानती है, त्रुटि करने वालों के लिए विनती करती है, और माँगती है कि ध्वस्त यज्ञ पुनः स्थापित हो। यह मेल-मिलाप का अध्याय है, और उस करुणा का जो एक विनम्र याचना का उत्तर देती है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 6 (षष्ठ अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: भगवान् शिव का प्रसादन
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (जिसमें ब्रह्मा की प्रार्थना उद्धृत है)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: ब्रह्मा का लोक, तथा कैलास पर्वत, भगवान् शिव का धाम
- केन्द्रीय विषय: ब्रह्मा देवताओं को कैलास ले जाकर भगवान् शिव का प्रसादन तथा दक्ष के ध्वस्त यज्ञ के पुनरुद्धार की याचना करते हैं
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 6, श्लोक 1-53
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 5 में, सती की मृत्यु का समाचार कैलास पर भगवान् शिव तक पहुँचा, और उनका शोक अपार क्रोध में बदल गया। उनकी जटा की एक लट से विशालकाय वीरभद्र प्रकट हुए, जिन्होंने रुद्र के गणों का नेतृत्व करते हुए दक्ष के यज्ञ का विध्वंस किया, पवित्र स्थल को नष्ट किया, शिव के अपमान का समर्थन करने वालों को दण्ड दिया, और अन्ततः दक्ष का शिरच्छेद करके समस्त भवन को जला दिया। पराजित तथा भयभीत देवगण किसी उपाय की खोज में रह गए — और यह अध्याय उसी खोज से आरम्भ होता है।

देवगण ब्रह्मा की शरण में

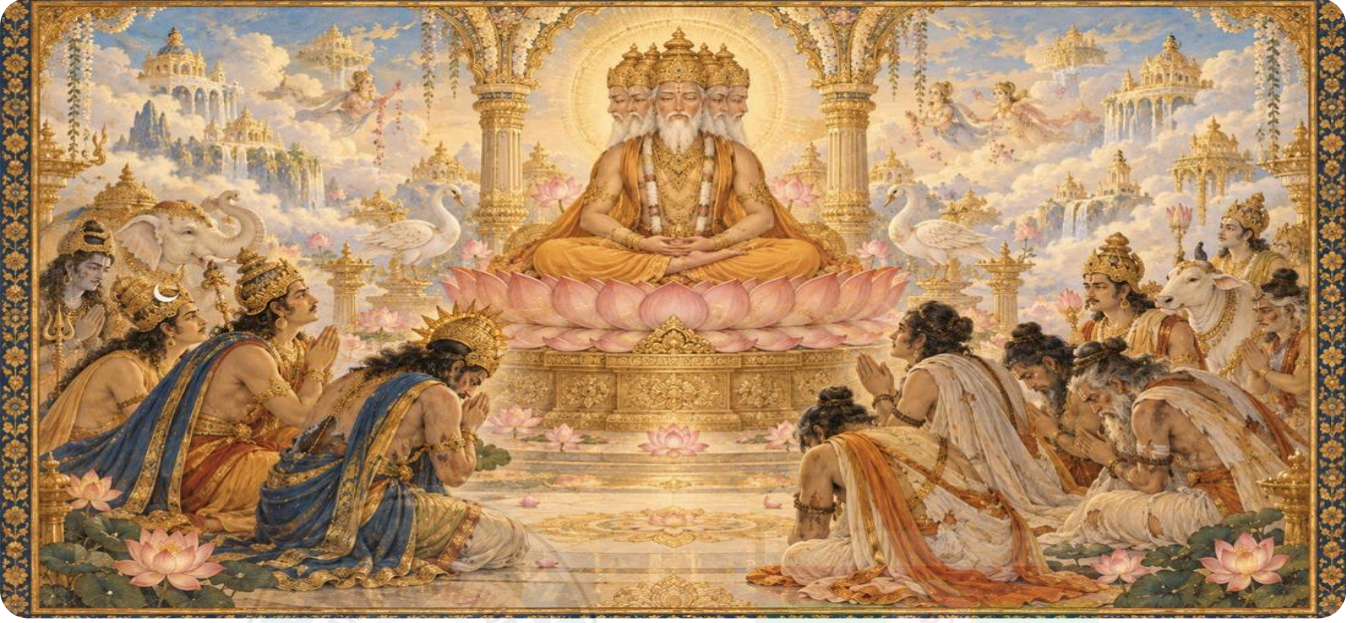
रुद्र के गणों से पराजित तथा भय से आक्रान्त, त्रिशूलों तथा गदाओं से अपने अंग-भंग किए हुए, देवगण तथा यज्ञ के ऋत्विज ब्रह्मा के पास पहुँचे और उन्हें सब कुछ बताया जो घटित हुआ था। किन्तु कमलयोनि ब्रह्मा तथा विश्वात्मा भगवान् नारायण ने यह समस्त विपत्ति पहले ही देख ली थी और दक्ष के यज्ञ में गए ही नहीं थे।

उपलभ्य पुरैवैतद्भगवानब्जसम्भवः ।

नारायणश्च विश्वात्मा न कस्याध्वरमीयतुः ॥ ३ ॥

*upalabhya puraivaitad bhagavān abja-sambhavaḥ nārāyaṇaś ca viśvātmā na kasyādhvaram
īyatuh*

अर्थ: यह सब पहले ही जान लेने के कारण, कमलयोनि तेजस्वी ब्रह्मा तथा विश्वात्मा भगवान् नारायण दक्ष के यज्ञ में नहीं गए। (स्कन्ध 4, अध्याय 6, श्लोक 3)



रुद्र के गणों से पराजित तथा भय से आक्रान्त, देवगण तथा यज्ञ के ऋत्विज ब्रह्मा के समक्ष आते हैं और उस विपत्ति की कथा उनके सामने रखते हैं (श्लोक 1-2)।

उनका वृत्तान्त सुनकर, ब्रह्मा ने उन्हें क्षमा नहीं किया। उन्होंने कहा कि जो अपने से कहीं अधिक शक्तिशाली से, जिसका उन्होंने स्वयं अपराध किया हो, बदला लेना चाहते हैं, उनका प्रायः भला नहीं होता। उनका वास्तविक दोष, उन्होंने कहा, भगवान् शिव को यज्ञ के उस भाग से वंचित करना था जो उनका अधिकार था। उपाय अवज्ञा नहीं बल्कि विनम्रता था: उन्हें जाकर निष्कपट हृदय से शिव के चरण पकड़ने और उनकी क्षमा माँगनी चाहिए, क्योंकि वे शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं — और यदि उनका क्रोध बना रहा तो अपने रक्षकों सहित यह संसार टिक नहीं सकेगा। न स्वयं ब्रह्मा, न यज्ञ के अधिष्ठाता देव, न देवगण, न ऋषि तक शिव के स्वरूप तथा शक्ति की पूर्ण सीमा को सचमुच जानते थे; उस पूर्णतः स्वतन्त्र भगवान् को प्रसन्न करने का उनके चरणों में गिरने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं था।

कैलास की यात्रा

देवताओं को इस प्रकार परामर्श देकर, ब्रह्मा उनके साथ, तथा पितरों और प्रजापतियों के साथ, अपने लोक से कैलास पर्वत की ओर चल पड़े, जो भगवान् शिव का प्रिय धाम है। जो पर्वत उन्होंने देखा वह एक आश्चर्य था: रत्नों तथा अनेक रंगों के खनिजों के शिखर, हर प्रकार के वृक्षों तथा लताओं से आच्छादित, मयूरों तथा कोकिलों और गुंजार करते भ्रमरों से जीवन्त, दिव्य वृक्षों तथा कमल-भरे सरोवरों से सुशोभित, और सबसे बढ़कर नन्दा नदी से पवित्र, जिसके जल को कभी सती ने उसमें स्नान करके पावन किया था। देवगण शिव के पर्वत की मनोहरता देखकर विस्मित हुए।



ब्रह्मा के नेतृत्व में, देवगण उच्चतर लोकों से कैलास पर्वत की रत्नमय ऊँचाइयों की यात्रा करते हैं, भगवान् शिव के प्रिय धाम की मनोहरता पर विस्मित होते हुए (श्लोक 8-22)।

कुबेर की प्रसिद्ध नगरी अलका तथा सुगन्धित सौगन्धिक उद्यान को, और नन्दा तथा अलकनन्दा उन दोनों पवित्र नदियों को, जिनके जल भगवान् विष्णु के चरणों की रज से पावन हैं, पार करके, वे अन्ततः एक महान् वटवृक्ष के पास पहुँचे — सौ योजन ऊँचा, स्थायी शीतल छाया करता हुआ, फिर भी बिना किसी घोंसले के — जिसके नीचे मुक्ति के अभिलाषी गहन ध्यान में एकत्र होते थे।

भगवान् शिव का दर्शन

वहाँ, उस वृक्ष के नीचे, देवगण ने भगवान् शिव को स्वयं मृत्यु के समान विराजमान देखा — किन्तु ऐसी मृत्यु जिसने अपना समस्त क्रोध त्याग दिया हो — पूर्ण शान्ति में, मुक्ति के अभिलाषियों की शरण।

तस्मिन्महायोगमये मुमुक्षुशरणे सुराः ।

ददृशुः शिवमासीनं त्यक्तामर्षमिवान्तकम् ॥ ३३ ॥

tasmin mahā-yogamaye mumukṣu-śaraṇe surāḥ dadṛśuḥ śivam āsīnaṁ tyaktāmarṣam ivāntakam

अर्थ: वहाँ, उस परम योग के स्थान तथा मुक्ति के अभिलाषियों की शरण में, देवगण ने भगवान् शिव को विराजमान देखा — स्वयं मृत्यु के समान, किन्तु समस्त क्रोध त्याग दिए हुए। (स्कन्ध 4, अध्याय 6, श्लोक 33)

उनकी सेवा में सिद्ध तथा शान्त आत्माएँ, सनन्दन तथा अन्य, और उनके मित्र कुबेर उपस्थित थे। शान्त-स्वरूप, सान्ध्य मेघ के समान वर्ण वाले, उन्होंने तपस्वियों को प्रिय चिह्न धारण किए थे — भस्म, जटा, मृगचर्म, तथा मस्तक पर अर्धचन्द्र। कुश के आसन पर विराजमान, अपना हाथ उपदेश की मुद्रा में किए, वे महर्षि नारद को सनातन ब्रह्म का सत्य समझा रहे थे, जबकि अन्य श्रेष्ठ जन सुन रहे थे। ब्रह्मा को आते देख, भगवान् शिव उठ खड़े हुए और शीश झुकाकर उनका अभिवादन किया, और उनके चारों ओर बैठे सिद्ध तथा ऋषि भी झुक गए।



ब्रह्मा को आते देख, भगवान् शिव अपने ध्यान के आसन से उठकर शीश झुकाकर उनका सादर अभिवादन करते हैं, और एकत्रित सिद्ध तथा ऋषि भी बदले में झुक जाते हैं
(श्लोक 40-41)।

ब्रह्मा की प्रार्थना

तब ब्रह्मा ने, मुस्कराते हुए, भगवान् शिव को सम्बोधित किया, जो अब भी उन्हें झुककर प्रणाम कर रहे थे। उन्होंने शिव की सच्ची महिमा को स्वीकार करते हुए आरम्भ किया: कि वे विश्व के शासक हैं, अखण्ड ब्रह्म से अभिन्न, जो एक ही साथ शक्ति के — उस दिव्य ऊर्जा के जो सृष्टि की योनि है — और शिव के, उस पुरुष के जो उसका बीज है, स्रोत हैं।

ब्रह्मोवाच

जाने त्वामीशं विश्वस्य जगतो योनिबीजयोः ।

शक्तेः शिवस्य च परं यत्तद्ब्रह्म निरन्तरम् ॥ ४२ ॥

brahmovāca jāne tvām īśaṁ viśvasya jagato yoni-bijayoḥ śakteḥ śivasya ca param yat tad brahma nirantaram

अर्थ: ब्रह्मा ने कहा: मैं आपको विश्व का ईश्वर जानता हूँ, वह परम अखण्ड ब्रह्म, जो शक्ति तथा शिव दोनों के — समस्त सृष्टि की योनि तथा बीज के — स्रोत हैं। (स्कन्ध 4, अध्याय 6, श्लोक 42)

शक्ति तथा शिव के माध्यम से, जो मूलतः एक हैं, अपनी लीला करते हुए, ब्रह्मा ने आगे कहा, भगवान् ही इस विश्व की सृष्टि, पालन तथा संहार करते हैं, जैसे मकड़ी अपना जाल बुनती है, उसे रखती है, और फिर उसे अपने भीतर समेट लेती है। भगवान् ने ही वेदों की रक्षा के लिए दक्ष के माध्यम से यज्ञ की संस्था प्रवर्तित की थी, और उचित आचरण की मर्यादाएँ नियत की थीं। ब्रह्मा ने त्रुटि करने वालों के लिए कोमलता से विनती की: क्रोध, उन्होंने कहा, उन उदात्त आत्माओं पर हावी नहीं होता जो समस्त प्राणियों में भगवान् को देखती हैं; और जिनका मन माया से मोहित

है, अनुष्ठान तथा भेद में स्थित है, वे महान् जनों की शक्ति के बजाय उनकी करुणा के पात्र हैं, क्योंकि वे अपने ही प्रतिकूल भाग्य से प्रेरित होकर कर्म करते हैं। शिव का अपना विवेक, सर्वज्ञ होने के कारण, उस माया से अछूता था — और इसलिए ब्रह्मा ने विनती की कि वे दक्ष तथा अन्यो पर कृपा बरसाएँ जिनकी समझ धुँधली पड़ गई थी।

ब्रह्मा की इस प्रार्थना का गहन तात्पर्य यहीं निहित है, जिससे प्रत्येक भक्त दूसरे के दोष का सामना करने में मार्गदर्शन पाता है। वे केवल यह नहीं माँगते कि शिव दोषियों को क्षमा कर दें; वे यह भी स्पष्ट करते हैं कि एक उदात्त आत्मा उन्हें दण्ड देने से क्यों विरत रहती है। जो ईर्ष्या से भरे हैं, जो दूसरों के सौभाग्य के प्रति कटु वचन बोलते हैं, वे अपने ही असन्तोष से पहले ही नष्ट हो चुके हैं — भाग्य स्वयं उनसे निपट चुका है, और उन्हें पुनः दण्डित करने से कुछ प्राप्त नहीं होता। सच्चे महत्त्व वाला व्यक्ति, ब्रह्मा कहते हैं, अपना हाथ दुर्बलता से नहीं बल्कि करुणा से रोकता है, यह देखकर कि अपराधी का अपना ही मोह पर्याप्त कष्ट है। यही कारण है कि शिव से, जो स्वयं माया से अछूते हैं, दक्ष तथा ऋत्विजों के प्रति न्याय के बजाय कृपा दिखाने की विनती की जाती है (श्लोक 46-49)।

यज्ञ के पुनरुद्धार की याचना

तब ब्रह्मा ने अपनी विशेष याचना रखी। भगवान्, उन्होंने प्रार्थना की, उस यज्ञ को पुनः जीवित करें जो ध्वस्त होकर अपूर्ण रह गया — अपूर्ण इसलिए कि अविवेकी ऋत्विजों ने शिव को उनका अधिकारपूर्ण भाग नहीं दिया था, यद्यपि यज्ञ अपना फल उन्हीं के द्वारा देता है। दक्ष पुनः जीवित हो जाएँ; भग को उसके नेत्र वापस मिल जाएँ, ऋषि भृगु को उसकी दाढ़ी, पूषा देव को उसके दाँत; जिन देवताओं तथा ऋत्विजों के अंग टूट गए हैं वे पुनः पूर्ण हो जाएँ। और आहुतियों में जो कुछ शेष रहा हो वह शिव का अपना भाग बन जाए, ताकि यज्ञ अन्ततः उनके भाग के पुनः स्थापित होने के साथ पूर्ण हो सके।

एष ते रुद्र भागोऽस्तु यदुच्छिष्टोऽध्वरस्य वै ।

यज्ञस्ते रुद्रभागेन कल्पतामद्य यज्ञहन् ॥ ५३ ॥

eṣa te rudra bhāgo 'stu yad-ucchiṣṭo 'dhvarasya vai yajñas te rudra bhāgena kalpatām adya yajña-han

अर्थ: हे रुद्र, यज्ञ का जो यह शेष भाग है वह आपका भाग हो; और हे यज्ञ के विध्वंसक, यह यज्ञ आज आपके भाग के पुनः स्थापित होने के साथ विधिवत् पूर्ण हो जाए। (स्कन्ध 4, अध्याय 6, श्लोक 53)



हाथ जोड़कर, ब्रह्मा शान्त भगवान् शिव को अपनी प्रार्थना अर्पित करते हैं, उनकी परम महिमा को स्वीकार करते हुए और यह विनती करते हुए कि दक्ष को क्षमा किया जाए तथा ध्वस्त यज्ञ पुनः स्थापित हो (श्लोक 42-53)।

ब्रह्मा की याचना के साथ षष्ठ अध्याय समाप्त होता है। क्रोध का तूफान शान्त हो चुका है; अवज्ञा का स्थान विनम्रता ने ले लिया है; और भगवान् की करुणा के लिए द्वार खुला खड़ा है। शिव क्या उत्तर देंगे, और किस प्रकार यज्ञ पुनः स्थापित होगा तथा दक्ष को नया जीवन मिलेगा, यह अगला अध्याय बताएगा।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. मेल-मिलाप विनम्रता से आरम्भ होता है, अवज्ञा से नहीं। ब्रह्मा देवताओं को प्रति-सेना जुटाने की नहीं, बल्कि निष्कपट हृदय से शिव के चरणों में गिरने की सलाह देते हैं। अन्याय से वापसी का मार्ग ईमानदार पश्चात्ताप तथा क्षमा-याचना है (श्लोक 5-7)।
2. भूल को स्वीकार किए बिना उसका उपचार नहीं हो सकता। ब्रह्मा वास्तविक दोष को स्पष्ट रूप से नाम देते हैं — देवताओं ने शिव को उनके अधिकारपूर्ण भाग से वंचित किया। कृपा माँगी जाती है, किन्तु केवल अपराध को स्वीकार करने के पश्चात् (श्लोक 5)।
3. भगवान् महान् जनों की भी पूर्ण समझ से परे हैं। ब्रह्मा स्वीकार करते हैं कि न वे और न ऋषि शिव के स्वरूप तथा शक्ति की सीमा को सचमुच जानते हैं। सच्ची श्रद्धा में यह विनम्रता सम्मिलित है कि भगवान् हमारी समझ से परे हैं (श्लोक 7)।
4. महान् जनों की करुणा त्रुटि करने वालों पर दिखाई जाती है। ब्रह्मा विनती करते हैं कि जो माया से मोहित हैं, अनुष्ठान तथा भेद में स्थित हैं, वे दण्ड के बजाय कृपा के पात्र हैं — क्योंकि जिसका अपना ही असन्तोष उसे पहले ही दण्डित कर चुका है, उसे और आघात की आवश्यकता नहीं। सचमुच उदात्त जन अपनी शक्ति को दुर्बलता से नहीं बल्कि करुणा से संयत रखते हैं और उसका प्रयोग उठाने के लिए करते हैं, कुचलने के लिए नहीं (श्लोक 46-49)।
5. क्रोध ब्रह्म की शान्ति के आगे झुक जाता है। देवगण शिव को क्रोधित नहीं, बल्कि शान्ति में विराजमान पाते हैं, “समस्त क्रोध त्याग दिए हुए मृत्यु के समान,” ब्रह्म के आनन्द में लीन और सनातन सत्य का उपदेश देते हुए। तूफान के पश्चात् भगवान् की स्थिरता स्वयं एक शिक्षा है (श्लोक 33)।

एक भाक्तेपूणं चिन्तन

पिछले अध्याय की अग्नि तथा गर्जन के पश्चात्, यह अध्याय एक महान् वृक्ष के नीचे की शीतल छाया के समान आता है। इसका हृदय वह क्षण है जब देवगण, जिन्होंने भगवान् का अपराध किया और फिर विनम्र किए गए, अन्ततः उनकी क्षमा माँगने आते हैं — और उन्हें प्रतिशोधी नहीं बल्कि शान्त पाते हैं, शान्ति में विराजमान और सत्य का उपदेश देते हुए। यहाँ गहरा सान्त्वना है। हम सब, कभी-कभी, इन देवताओं की स्थिति में होते हैं: हमने वहाँ सम्मान रोक लिया जहाँ वह देय था, गलत में आनन्द लिया, और फिर परिणाम भोगे। यह अध्याय हमें घर लौटने का मार्ग दिखाता है। वह अपने को उचित ठहराना नहीं, न यह भय करना कि भगवान् हमें स्वीकार नहीं करेंगे, बल्कि विनम्रता से आना, अपने दोष को स्वीकार करना, और भगवान् के चरणों में गिरना है — क्योंकि वे, जैसा ब्रह्मा कहते हैं, शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। और ब्रह्मा की प्रार्थना हमें यह भी सिखाती है कि दूसरों के लिए, यहाँ तक कि उनके लिए भी जिनके अन्धेपन ने हानि की है, कैसे प्रार्थना करें: निन्दा के साथ नहीं, बल्कि माया से मोहित मनो पर कृपा की याचना करते हुए। ऐसी प्रार्थना का उत्तर देने वाली करुणा इस समस्त अध्याय के नीचे बहता हुआ शान्त वचन है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, ब्रह्मा से वह विनम्रता सीखें जो उपचार करती है। यदि कोई ऐसा है जिसका आपने अपराध किया हो, या भगवान् का कोई सम्मान जो आपने रोक लिया हो, तो कुछ शान्त क्षण लेकर उसे बिना किसी बहाने भगवान् के समक्ष स्पष्ट रूप से स्वीकार करें, और उसे इन शब्दों के साथ अर्पित कर दें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”। फिर, ब्रह्मा की प्रार्थना की भावना में, केवल अपने लिए ही नहीं बल्कि किसी भी ऐसे व्यक्ति के लिए भी कृपा माँगें जिसकी उलझन या अभिमान ने पीड़ा दी हो, उनके लिए भी जिन्होंने आपका अपराध किया हो। अवज्ञा तथा दोषारोपण के बजाय विनम्र पश्चात्ताप तथा करुणा को चुनकर, आप ठीक उसी मेल-मिलाप के मार्ग पर चलते हैं जिसे यह अध्याय खोलता है।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का षष्ठ अध्याय क्रोध से मेल-मिलाप की ओर मोड़ है। पराजित देवगण तथा ऋत्विज ब्रह्मा के पास आते हैं, जो उन्हें स्पष्ट रूप से बताते हैं कि उनका दोष भगवान् शिव को उनके अधिकारपूर्ण भाग से वंचित करना था, और एकमात्र उपाय विनम्र हृदय से उनकी क्षमा माँगना है। ब्रह्मा उन्हें कैलास पर्वत की मनोहरता के पार उस महान् वटवृक्ष तक ले जाते हैं जहाँ शिव शान्त धैर्य में, क्रोध से रहित और नारद को सनातन सत्य का उपदेश देते हुए विराजमान हैं। ब्रह्मा का अभिवादन करने को उठकर, शिव उनकी प्रार्थना स्वीकार करते हैं — एक प्रार्थना जो उनकी परम महिमा को स्वीकार करती है, माया से मोहित त्रुटिकर्ताओं के लिए विनती करती है, और माँगती है कि दक्ष पुनः जीवित हों, आहत देवगण पूर्ण हों, तथा ध्वस्त यज्ञ शिव के भाग के पुनः स्थापित होने के साथ पूर्ण हो। अध्याय उसी याचना के साथ, और खुले खड़े करुणा के द्वार के साथ समाप्त होता है। मैत्रेय हमें यहीं छोड़ते हैं, भगवान् के करुणामय उत्तर की प्रतीक्षा में।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, षष्ठ अध्याय, पृ. 309–315 (PDF पृ. 372–377)।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • बिश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-4-adhyay-6-shiva-prasadan.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

